स्वामीजी श्री रामचरणजी महाराज का जीवन परिचय

भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है – "यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारतः, अभ्युत्थानं अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यंऽहम" अर्थात् जब–जब धर्म की हानि होती है तब–तब मैं जन्म लेता हूं। राष्ट्र में बढ़ते मुस्लिम प्रभाव, धर्म में रूढ़िवादिता एवं आड़म्बर, धर्म–कर्म में आम जनता की रूचि में कमी होना, रामस्नेही सम्प्रदाय की स्थापना के प्रमुख कारण रहें। **रामस्नेही सम्प्रदाय की स्थापना विजयवर्गीय जाति के कापड़ी गौत्र में जन्मे श्री रामचरण जी विजयवर्गीय महाराज ने की**। ये निर्गुण भक्ति के उपासक एवं गुरू परम्परा के पोषक रहे। ज्ञान, वैराग्य उनके साधन थें तथा सत्य, अहिंसा के भक्ति (प्रेमाभक्ति) टेक (एकेसुरवाद) उनके सिद्धान्त थे।

अवतरण - अन्तर्राष्ट्रीय रामस्नेही संप्रदाय शाहपुरा (भीलवाड़ा) पीठ के प्रवर्त्तक स्वामी श्री रामचरणजी महाराज का **जन्म शनिवार, 24-फरवरी, सन् 1720 ई** (विक्रम संवत् 1776, माघ मास, चौदस–शुक्ल पक्ष) के दिन अपने ननिहाल–सोड़ा (शूरसेन) ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री बख्तराम (भगतराम) एवं माता का नाम श्रीमती देऊजी (देवहूति) था। इनका मूल ग्राम बनवाड़ा, जाति विजयवर्गीय एवं गोत्र कापड़ी था। पुत्र जन्म की प्रसन्नता में बनवाड़ा में सूचना मिलते ही गाजे–बाजे बजे एवं समस्त ग्राम में नारियल बंटवाए गये। दूसरे दिन परिवार वालों को भोजन कराया गया। ज्योतिषी से जन्म पत्रिका बनवाई गई। तब उसने बताया कि इस बालक की जन्म कुण्डली में भारी ग्रह पड़े हुए है, ऐसा पुत्र तो न छत्रपति के घर हुआ है और न होगा। नामकरण संस्कार के दिन आपका नाम रामकिशन घोषित हुआ।

शैशव - श्री रामकिशन का रूप सूर्य की आभा के समान दैदीप्यमान था। वे गौर वर्ण के थे तथा उनके नयन कमल के सदृश थे। लम्बे हाथ का व्यक्तित्व अत्यन्त मोहक था। छोटी अवस्था में ही बड़ों के समान सद्विवेक प्राप्त था। बाल्यकाल में ही कुशाग्र बुद्धि एवं सर्वगुणसम्पन्नता ने इन्हें सबका प्रिय बना दिया।

गृहस्थ जीवन - श्री रामकिशनजी का विवाह चांदसेन ग्राम निवासी श्री गिरधारी लाल विजयवर्गीय (खूटेंटा) की सुपुत्री गुलाब कुँवर बाई के साथ हुआ। जनश्रुति के अनुसार इनके एक पुत्र और एक कन्या हुई। कुछ लोग कहते हैं कि एक पुत्री ही हुई।

जीविकोपार्जन - शिक्षा के बाद इन्होनें जयपुर राज्य में सेवा की। अपनी कर्तव्यनिष्ठा, कार्य कुशलता, न्याय परायणता एवं ईमानदारी के कारण ये निरन्तर पदोन्नत होते गए और **दीवान** पद तक पहुंच गए।

जीवन परिवर्तन की दो घटनाएं - (1) एक बार श्री रामकिशनजी अपने ससुराल चांदसेन गए। भोजन करने के बाद वे दुकान में लेटे हुए थे तभी एक यति उस मार्ग से निकला, उसकी दृष्टि इनके पदतल की रेखा पर पड़ गई। देखकर वह यति वहां उपस्थित व्यक्तियों से बोला – 'इनके चरण में उर्ध्व रेखा है, मुझे आश्चर्य हो रहा है कि ये यहां कैसे लेटे हुए हैं! ज्योतिष के अनुसार तो इन्हे राजा होना चाहिए या दृढ़ वैराग्यवान योगी'।

(2) यति तो अपनी बात कहकर चला गया। नींद खुली तब वहां उपस्थित लोगों ने श्री रामकिशन जी को यति के कथन से परिचित करा दिया। उसी रात को श्री रामकिशनजी को एक स्वप्न आया। स्वप्न में वे सरिता में स्नान करते समय तेज धार की चपेट में आ गए और बहने लगे। बचकर निकलने के उनके सारे प्रयास विफल हो गए। मृत्यु का भय सताने लगा। कुछ ही समय पश्चात् एक शुभ्र वेशधारी साधु दौड़ता हुआ आया और उसने इन्हें बांह पकड़कर बाहर निकाला। उसी समय निद्रा टूटी और स्वप्न भंग हो गया।
नींद भंग होने के साथ ही श्री रामकिशनजी की मोह निद्रा भी हटने लगी। आत्म चिन्तन प्रारम्भ हुआ। स्वप्न के संबंध में विचार करने लगे। यह नदी क्या है ? डूबने वाला कौन है? बचाने वाला कौन है ? आत्म बोध हुआ "मैं (जीव) मोह रूपी नदी में डूब रहा हूँ तब सद्गुरू ने आकर बचाया। इसी चिन्तन में वैराग्य जगा तथा सांसारिक मोह बंधन को तोड़कर स्वयं मुक्ति हेतु घर–बार छोड़कर सद्गुरू की खोज में निकल पड़े। शाहपुरा पहुंचने पर स्वप्न की छवि वाले सन्त के बारे में संकेत मिला की ऐसे सन्त दांतड़ा ग्राम में विराजते हैं। यह सुनकर वे अत्यन्त हर्षित हुए और प्रभात होते ही दांतड़ा ग्राम के लिए चल पड़े। उस समय उनकी आयु 31 वर्ष व 7 मास की थी।

स्वामी श्री कृपाराम जी से भेंट - दांतड़ा पहुंच कर सन्त दासोत सम्प्रदाय के **महन्त श्री कृपारामजी** के दर्शन कर अत्यन्त उल्लसित हुए। स्वप्न में जिस सन्त ने उन्हें बचाया था वहीं साक्षात् मूर्ति उनके सामने थी। भाव विभोर होकर शीश नवाया, प्रणाम किया, प्रसाद चढ़ाया और प्रदक्षिणा की।

दीक्षा - एक पक्ष (पखवाड़े) तक विभिन्न प्रकार के प्रश्नोत्तर से परीक्षा लेकर स्वामी श्री कृपारामजी ने श्री रामचरण जी महाराज को सुपात्र समझ कर विक्रम संवत् 1808 की भाद्रपद शुक्ला सप्तमी, गुरूवार के दिन श्री रामकिशनजी को दीक्षा दी। '**राम**' मंत्र एवं '**रामचरण**' नाम प्रदान कर इन्हें अपना शिष्यत्व प्रदान किया।

गूदड़ वेश धारण - अपने गुरू श्री कृपारामजी से दीक्षा प्राप्त कर स्वामी श्री रामचरण जी ने गुरू के सम्प्रदाय का गूदड़ वेश धारण कर लिया। भजन एवं स्मरण साधना में उनका समय व्यतीत होने लगा। कुछ समय बाद आप अपने गुरू के निर्देश पर अपने गुरू भाई की सेवा में बहादुरगढ़ गये।
वहां एक दिन आप भोजन बना रहे थे, सावधानी रखते हुए भी एक पीपल के वृक्ष की सूखी लकड़ी आपके द्वारा चूल्हे में लगा दी गई जिसमें चीटियां थी। अग्नि के ताप से परेशान होकर चींटियां उस लकड़ी के छेद में से बाहर निकलने लगी। यह देखकर इनका मन उद्विग्र हो उठा। वे आत्मग्लानि अनुभव करने लगे। तत्काल रसोई बनाने का कार्य छोड़कर बाहर निकल गए। गुरू भाई ने इन्हें गुरूजी के पास लौटने के लिए निर्देशित किया। लौटते समय राह में एक वृद्ध रसायनी ने इन्हें तांबे से सोना बनाने की विधि सिखाने का प्रस्ताव रखा जिससे पुण्य कमा सके किन्तु इन्होनें तो स्पष्ट जवाब दे दिया हमने तो राम रसायन प्राप्त कर ली है अतः आप की यह विद्या मुझे नहीं चाहिए।

दांतड़ा पहुंचकर आपने गुरू महाराज को बहादुरपुर की सारी घटना सुना दी। श्री कृपारामजी ने तब से इन्हें भोजन बनाने की सेवा से मुक्त कर दिया। अब तक स्वामी श्री रामचरण जी को गूदड़ वेश में साधना करते हुए लगभग सात वर्ष की अवधि व्यतीत हो चुकी थी। किन्तु गुरू के आदेश से उनके साथ गलता मेले में चलने के सुझाव को स्वीकार कर लिया। इस यात्रा में चूरे ग्राम पहुंचने पर भोजन की व्यवस्था के सम्बन्ध में साधु मण्डली में परस्पर मतभेद और त-तू मैं-मैं होते हुए इन्होनें देखा तो बड़े दुःखी हुए एवं गुरूजी से निवेदन किया कि क्या यहीं मुक्ति का मार्ग हैं ? स्वामी श्री कृपाराम जी ने अपने शिष्य के उद्वेलित चित्त के वेग को समझ कर इन्हें प्रवृत्ति मार्ग को छोड़कर निवृत्ति मार्ग अपनाने का सुझाव बताया।

गलता मेले के बाद श्री राम चरण जी वृन्दावन की ओर जाने लगे, राह में उन्हें एक साधु ने पूछा–रामस्नेही तुम कहा चलिया ? इन्होनें उत्तर दिया – वृन्दावन। तब उसने सुझाव दिया, तुम निवृत्ति मार्ग के अनुयायी हो वहां तो प्रवृत्ति ढ़ाठ है तुम्हारा मन नहीं लगेगा। वहां से लौटकर गुरू से आज्ञा प्राप्त कर चाकसू ग्राम चले गये। वहां वर्षा में भीगने से तालाब के किनारे भजन करते हुए कांपने की अवस्था में देखकर श्री उपमीचंद जी ने इन्हें हिरमची रंग की चादर भेंट में दी। तब से रामस्नेही सम्प्रदाय में हिरमची व गुलाबी रंग प्रचलन में हो गया।

भीलवाड़ा की ओर - विक्रम संवत् 1817 में भीलवाड़ा पहुंचकर नगर के पश्चिम की ओर स्थित मयाचन्द जी की बावड़ी में आसन जमाया। यहां तक आप अकेले विराजते थे, तब तक कोई भी जिज्ञासु या शिष्य आपके साथ नहीं था। स्वामी श्री रामचरणजी भीलवाड़ा में निर्गुण भक्ति के प्रचार के लिए आए थे। प्रारम्भ में साधनारत स्वामीजी ने मौनव्रत धारण किया था। उनसे सर्वप्रथम भेंट करने वाले श्री देवकरणजी थे। परस्पर प्रश्नोत्तर हुआ। उनकी जिज्ञासा शान्त हुई। श्री देवकरणजी ने श्री नवलरामजी से, फिर श्री नवलरामजी ने श्री कुशलरामजी से स्वामीजी के साधुता की एवं सिद्धान्तों की प्रशंसा की । दूसरे दिन तीनों एक साथ स्वामीजी के दर्शनार्थ आए। शनैः शनैः सम्पूर्ण भीलवाड़ा में इनकी ख्याति फैल गई। नगर सेठ भी इनके दर्शनार्थ आया एवं इन्हें देखकर प्रफुल्लित हुआ। उत्तम ज्ञान चर्चा होने लगी। जिज्ञासुओं की संख्या बढ़ी । यहीं पर इन्होंने **विक्रम संवत 1817 में रामस्नेही सम्प्रदाय की स्थापना की**। रामस्नेही का अर्थ है राम से स्नेह करने वाले – राम से प्रेम करने वाले।

श्री देवकरण, श्री कुशलराम एवं श्री नवलराम तीनों अपनी धुन के पक्के थे। ये स्वामीजी के यशस्वी शिष्य हुए । उस समय श्री कुशलरामजी की उम्र मात्र तीस वर्ष, श्री देवकरणजी की पच्चीस वर्ष एवं श्री नवलरामजी की इक्कीस वर्ष थी। श्री कुशलरामजी के एक पुत्र एवं एक पुत्री, श्री देवकरणजी के एक पुत्र तथा श्री नवलरामजी की पत्नी गर्भवती थी। फिर भी इन तीनों ने एक साथ शीलव्रत धारण कर गुरू उपदेश की दृढ़निष्ठा का परिचय दिया।

वाणी रचना - गुरू से प्राप्त 'राम' मंत्र की साधना करके स्वामी श्री रामचरणजी ने राम स्मरण का अभ्यास बढ़ाया। कंठ, हृदय, नाभि कमल से शब्द को षट्चक्रों का भेदन करते हुए गगन मण्डल, सहस्त्रार तक पहुंचाने की योग साधना (सुरति शब्द योग मिलाने) में सफल हुए। बारह वर्ष तक निरन्तर साधनारत होकर मदोन्मत की भांति उपदेश देने लगे। स्वः अनुभूति का खजाना अनुभव वाणी (अणभै वाणी) के शब्दों के रूप में खुलने लगा। कहते है जैसे नदीं में लहरें उठती है, वैसे ही महाराज भजन वेग से शब्द फरमाने लगे। विक्रम संवत् 1820 से 1827 के बीच में सम्पूर्ण अनुभव वाणी का अंगबद्ध रूप में हस्तलिखित संपादन सम्पन्न हुआ। ज्ञान, भक्ति, वैराग्य की त्रिवेणी प्रवाहित की तथा सत्य, अहिंसा, भक्ति, टेक के सिद्धान्तों का समन्वित रूप प्रकट किया। इसी अवधि में बारह बीघा भूमि में रामद्वारे की स्थापना भीलवाड़ा में हुई एवं फूलडोल उत्सव प्रारम्भ हुआ।

विरोध की अनुगूँज - व्यसन विकारों, समाजिक रूढ़ियों एवं धार्मिक अंधविश्वासों एवं पाखंडो के विरूद्ध स्वामीजी ने उपदेश दिए तथा भक्ति का प्रचार किया। जिनके स्वार्थों पर चोट पहुंची ऐसे द्विज परिवारों ने उदयपुर जाकर महाराणा को स्वामी श्री रामचरणजी के विरूद्ध शिकायत कर दी। बिना विचारे राजा ने एक कर्मचारी के द्वारा यह आदेश भिजवा दिया – 'आपका प्रचार बन्द करो या बाहर चले जाओ'।

कुहाड़ा प्रस्थान - महाराणा के दूत का संदेश पाते ही स्वामीजी भीलवाड़ा नगर को छोड़कर कुहाड़ा ग्राम में चले आए। कुहाड़ा भीलवाड़ा नगर से चार कि.मी. दूर था। वहां कोठारी नदी के तट पर वट वृक्ष के नीचे आपने आसन जमाया। यहां साधना निर्विघ्न चलने लगी।

प्रसिद्ध हुआ शाहपुरा - स्वामी श्री रामचरणजी के शाहपुरा आगमन (विक्रम संवत 1826) के पश्चात भीलवाड़ा के उनके अनुयायी गृहस्थ, साहूकार, आसामियों सहित शाहपुरा आ गए। शाहपुरा नरेश ने स्वामीजी के सेवकों को बसाने में समुचित सहयोग दिया एवं नया बाजार निर्माण करवाकर उन्हें सुविधाएं प्रदान की।

फूलडोल - भीलवाड़ा के समान शाहपुरा में भी फूलडोल उत्सव प्रारम्भ हुआ। स्वामी रामचरण जी की छतरी मे ही इसका आयोजन होने लगा। चारों ओर देश–देशान्तर से रामस्नेही साधु, भक्तजन एवं जिज्ञासु जन फूलडोल के अवसर पर शाहपुरा आने लगे। प्रारम्भ में यह फूलडोल मात्र मात्र एक दिन का था। स्वामीजी के निर्वाण के बाद यह चालीस दिन का हो गया। वर्तमान में यह पच्चीस दिन का एवं प्रमुख रूप से चैत्र शुक्ल एकम् से पॅचमी तक का हो गया है। उसमें भी पॅचमी का दिन नवदीक्षितों की शोभायात्रा, आर्चाय श्री के चातुर्मास के निर्णय, सन्तों के प्रवचन एवं जिनकी मनौतियॉ पूर्ण हुई है उनके द्वारा मिश्री–पताशे का प्रसाद वितरण होते देखकर अपार भीड़ आनन्द एवं उल्लास का अनुभव करती है। होली एवं पंचमी के दिन नगर में स्थित राममेड़ी पर जागरण होने लगा।

अनुभव वाणी - स्वामी श्री रामचरणजी ने विक्रम संवत् 1820–27 में भीलवाड़ा एवॅ शाहपुरा में अनुभव वाणी का उच्चारण किया था, उनको बत्तीस अक्षरों के श्लोकों में गणना करें तो 36,397 श्लोक बैठते हैं । इस वाणी के प्रारम्भ के आठ हजार श्लोकों का संग्रह, संपादन एवं लेखन माहेश्वरी वंशोद्भव स्वामीजी के परम शिष्य भीलवाड़ा निवासी शीलव्रती श्री नवलरामजी ने किया । शेष अठ्ठाईस हजार तीन सौ दस श्लोक संख्या परिमाण का लेखन, संकलन, संपादन स्वामी जी के शिष्य श्री रामजनजी महाराज ने लिपिबद्ध कर अंगबध्द किया। वर्तमान में अनुभव वाणी ग्रन्थ सन् 1925 ईं (विक्रम संवत् 1981) में 1000 पृष्ठों की छपी हुई मिलती थी, उसका नवीन संस्करण का प्रकाशन सन् 2005 ईं में हुआ।

निर्वाण में भी अद्भुत संयोग - स्वामी श्री रामचरण जी महाराज के निर्वाण (**गुरूवार-5 अप्रेल, सन् 1798 ईं**) में भी गुरू शिष्य परम्परा में भी एक चमत्कारपूर्ण दृष्टान्त प्रस्तुत हुआ है। शिष्य अपने गुरू से तिथी एवं वार में भी आगे रहे है :–

अठ्ठारह सौ षट् वर्ष मास फागुण बदी साते।
सन्त पधारी धाम सनीसर वार विख्याते ।।
बत्तीसे कृपाल छट्ट भाद्रप सुदि सुक्कर।
छोड़े आप शरीर परम पद पहुंचे मुक्कर।।
पचपन के बैसाख बदी पांचे गुरूवार।
रामचरण तन त्याग भये निज निराकारं।। 1069 ।।

1. स्वामी सन्तदास जी - विक्रम संवत 1806 फाल्गुन बदी सप्तमी, शनिवार।
2. स्वामी कृपाराम जी - विक्रम संवत 1832, भाद्रपद सुदी षष्ठी, शुक्रवार।
3. **स्वामी रामचरण जी - विक्रम संवत 1855, बैसाख बदी पंचमी, गुरूवार।**

दार्शनिक विचार - स्वामी श्री रामचरण जी महाराज ब्रह्मवादी थे और अद्वैत ब्रह्म में पूर्ण आस्था रखते थे। इनके मतानुसार ब्रह्म एक है – राम, रहीम, अल्लाह, निरंजन आदि उसी के नाम है। न कोई रूप है, न कोई आकार। वह सर्व व्यापक है, अन्तर्यामी है। वह निर्गुण और सगुण से परे हैं, ज्योतिस्वरूप है और उसी से संसार की सृष्टि हुई है। सूर्य, चंद्र आदि में उसका प्रकाश है। संसार के सभी सजीव एवं निर्जीव पदार्थ उनसे व्याप्त है। उसी ब्रह्म को नाम से पुकारा है। यह राम दशरथ पुत्र न होकर निर्गुर्ण, निराधार, निरजंन, निर्लेप, अगम, अगोचर है। स्वामी जी ने आत्मकल्याण का मार्ग आत्म दर्शन तथा सद्धर्म पालन बताया । जनसाधारण को मध्यम मार्ग विशिष्टाद्वैत का अनुसरण करवाया।

सन्त परम्परा - उस समय आपके 225 शिष्य थे। उनमें से प्रथम उत्तराधिकारी श्री रामजन जी महाराज हुए। तद्तन्तर श्री दूल्हेराम जी, श्री चत्तरदास जी, श्री नारायणदास जी, श्री हरिदास जी, श्री हिम्मतराम जी, श्री दिलशुद्धराम जी, श्री धर्मदास जी, श्री दयाराम जी, श्री जगरामदास जी, श्री निर्भयराम जी, श्री दर्शनराम जी महाराज, श्री रामकिशोर जी महाराज गादीदर हुए। **वर्तमान में इस पीठ पर पूज्य श्री रामदयाल जी महाराज विराजमान है।**

सम्प्रदाय की परम्पराऐं - रात्री भोजन निषेध, सात्विक एवं शाकाहारी, पानी छान कर पीना, चतुमार्स में एक ही स्थान पर निवास, गुरू भक्ति, 'राम' नाम का उच्चारण, निर्गुण

ब्रह्मरूप, नशीले पदार्थों का उपयोग निषेध, गले में कंठी, ललाट पर गंगामाटी का तिलक, संतो के लिए गेरूआ रंग के वस्त्र धारण करना।

कोई सवै आकार कूं, कोई निराकार का भाव। रामचरण वें संत जन मधिका करै उपाव।।
हद बेहद को पूछबो, रामचरण करि दूर। मधिका मारग सोधिकै, भंजन करो भरपूर।।
रामचरण संतातणा, रामनाम पंथ एक। अबै भर्म की मूलि सै, मत का बन्ध अनेक।।
पंथी चाले राम पंथ, मत सू बंधै नांहि। प्रवृत्ति पसारा छाडिकै, मिलै संत पदमांहि।।
समर्थ एको राम है, जाचक सबही देव। रामचरण समर्थ भजो, तजि जाचक की सेव।।
समर्थ की समर्थ सरण, निबल होय बलवंत। रामचरण बल नाम कै, लंक गयो हुनमंत।।
तुमतो रामदयाल हो, मैं अनाथ निरधार। रामचरण कह रामजी, बेग लगावोपार।।
रामचरण कह राम जी, मेरा गुन्हा बिसार । पिता परिहरै पूतकूं तो जीवे कूणं आधार।।

फूलडोल महोत्सव - बसन्त ऋतु के फाल्गुन मास में फूलडोल के अवसर पर स्वामी जी के शिष्य श्री कुशलराम जी, श्री नवलराम जी एवॅ भीलवाड़ा की जनता से प्रार्थना पर श्री महाराज रामद्वारे से शहर में पधारे तथा समस्त जनता को दर्शन देकर कृतार्थ किया। कहा जाता है कि इस अवसर पर देवताओं ने फूल बरसाए इसलिए इसे फूलडोल नाम दिया गया। इस घटना की पुनित स्मृति में प्रतिवर्ष फूलडोल महोत्सव मनाया जाता है। पीठासीन स्वामी इस अवसर पर रामद्वारे से शहर में पधारते हैं और रात्री जागरण एवं भजन कीर्तन एवं 'राम' स्मरण का आयोजन होता है।

इस अवसर पर स्वामी जी की **'अनुभव वाणी'** का पदार्पण होता है। यह वाणी एक श्रावक के सिर पर पधराई जाती है। यह परम्परा शुरू से चली आ रही है। फूलडोल के अवसर पर भारी मेला लगता है और धर्मनिष्ठ लोग वहां महाराज श्री के अवशेष – गुदडी एवम् कम्बल के दर्शन करते हैं।

इस प्रकार रामचरण जी की पुण्यतिथि बैसाख बुदी पंचमी, उनके श्राद्ध पर्यन्त फूलडोल मेला भरता था। किन्तु होली से प्रारम्भ होकर इस लोकोत्सव में भी सभी भावधारियों के ठहराव को असुविधाजनक समझकर चैत्र बुदी पंचमी को ही फूलडोल की महत्वपूर्ण तिथी के रूप में निर्वाण तिथि का प्रतीक मानकर सर्वाधिक महत्व प्रदान किया जाता है। इस दिन चातुर्मास का निर्णय होता है तथा श्रद्धालुओं के भावों को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए रात्रि जागरण भी किया जाता है।

सत्गुरू सन्त कृपाल जी रामचरण शिख तास के।
कारज करि कारण मिले तुम गुरू राम जन दास के।।

श्री रामचरण जी महाराज के परमधाम के बाद जिस स्थान पर आपकी देह का अग्नि संस्कार हुआ उसे **"रामनिवास धाम"** कहा जाता है। अन्य स्थान **"रामद्वारे"** कहलाते है। सबसे अधिक रामद्वारे मेवाड़ में हैं। मुख्य रामद्वारा भीलवाड़ा शहर का है। इसके अतिरिक्त कोटा, मुम्बई, अहमदाबाद, पुष्कर, हरिद्वार आदि में है। रामद्वारे में कोई मूर्ति नही होती।